अपनों से अपनी बात...

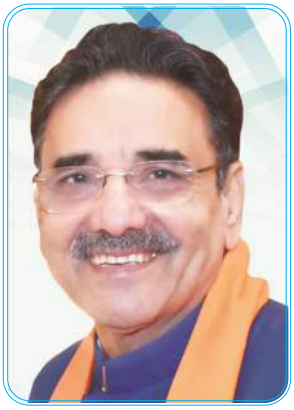

मेरे प्रिय आत्मीय,

शुभाशीर्वाद,

सबसे प्रिय शब्द है 'प्रेम' और सबसे प्रिय कार्य है 'प्रेम'...। प्रेम से ही जगत में उत्पति, पोषण और वृद्धि होती है। प्रकृति को देखों, बादल पृथ्वी से प्रेम करते है इसलिये उस पर बरसने के लिये तत्पर हो जाते है, समुद्र भी आकाश से प्यार करता है और वह अपनी ऊष्मा को वाष्प रूप में आकाश में भेजता है। हिमालय से निकली गंगा और अन्य नदियां भी सागर से अथाह प्रेम करती है इसीलिये वे निरन्तर गतिशील होती हुई सागर में समा जाती है। ऐसा करने से न तो पृथ्वी अपना अस्तित्व खोती है, न बादल, न सागर, न आकाश, न नदी।

हमारे शरीर को ही देखों शरीर की सारी नाड़ियों में रक्त प्रवाहित हो रहा है और इस प्रवाह का उद्देश्य है मैं हृदय में पहुंचकर पुनः शुद्ध होऊं और पुनः शरीर में निरन्तर प्रवाहमान रहूं। इसलिये हृदय को जिसमें मन बसता है प्रेम की आधार भूमि कहा गया है।

संसार में अभिवृद्धि प्रेम का ही स्वरूप है, प्रेम से न तो पुरुष छोटा होता है और न स्त्री छोटी होती है। सृष्टि का कण-कण जीवित, निर्जीव सभी पदार्थ प्रेम से ही तो एक-दूसरे के प्रति आकर्षित है।

यह बात निश्चित है कि **प्रेम के बिना ब्रह्माण्ड में कुछ भी नहीं हो सकता...।**

अब सबसे बड़ा प्रश्न है कि प्रेम किससे किया जाये? प्रेम स्वयं से किया जाये या समस्त संसार से किया जाये? इसका स्पष्ट उत्तर है सबसे पहले आप अपने आप से प्रेम करो, तब आप प्रेम का पहला अध्याय सीखोंगे। अपने आप से प्रेम करने का अर्थ है अपने शरीर से प्रेम अर्थात् शरीर को स्वस्थ रखना, अपने मन से प्रेम अर्थात् अपने भावों को सरस रखना।

प्रेम के चार पद है - आत्मभाव, आत्मलीन, आत्म शांति और आत्म आनन्द।

भीतर श्रेष्ठ भावों का उदय होगा तो हम अपने आप में ही लीन रह सकते है और उस स्थिति में आत्म शांति प्राप्त होगी और आत्मशांति ही आत्म आनन्द प्रदान करती है।

हम प्रेम प्राप्त करने के लिये भागते है, उसका उद्देश्य है - हमें आनन्द प्राप्त हो। पर आनन्द के लिये सबसे पहले स्वयं से प्रेम करना पड़ेगा।

स्वयं से प्रेम करने का अर्थ है अपने अस्तित्व, अपने मन, अपने शरीर और अपनी आत्मा का सम्मान करना। जब हम अपने आपको स्वीकार कर लेते है तो अपनी क्षमताओं को और सीमाओं दोनों को समझ लेते है तब जीवन सन्तुलित भाव से जागरुक भाव से जी पाते है।

स्वयं से प्रेम करना परम आवश्यक है, क्योंकि हमें अपने जीवन के प्रति जिम्मेदार बनना है, अपने विकास के लिये निरन्तर प्रयास करना है।

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।

मनुष्य स्वयं ही अपना मित्र है और स्वयं ही अपना शत्रु। जब वह स्वयं को समझकर अपने मन को सही दिशा देता है, तब वही जीवन को ऊंचा उठा सकता है। यही आत्मप्रेम का वास्तविक अर्थ है, अपने जीवन को बेहतर बनाने का संकल्प।

स्वयं से प्रेम करोगे तो भीतर आत्म विश्वास, सन्तुलन और सकारात्मकता का विकास होता है।

क्यों दूसरों की प्रशंसा और आलोचनाओं से प्रभावित हो? किसी से प्रभावित नहीं होना है। स्वयं को प्रेम करते हुए अपने निर्णय स्वयं लेने है और अपने निर्णयों के लिये अपने आपको जिम्मेदार बनाना पड़ता है।

अरे भाई! हम जैसे है वैसे है इस बात को स्वीकार कर लो, हर मनुष्य में कुछ गुण होते है, कुछ कमियां होती है। दोनों को ही स्वीकार करो। अपने शरीर और मन का ध्यान रखों। अपने आपसे प्रेम करोगे तो निरन्तर सकारात्मक विचार मन में उभरेंगे और आपको और अधिक मजबूत बनायेंगे।

क्यों करें हम दूसरों से तुलना? जब भी हम तुलना करते है तो असंतोष और हीन भावना में फंस जाते है। नहीं करनी है तुलना, स्वयं से प्रेम करते हुए अपने विकास और अपने मार्ग की ओर ही ध्यान देना है।

तब क्या होगा? आत्मविश्वास बढ़ेगा, निर्णय लेने की क्षमता मजबूत होगी, जीवन की चुनौतियों का सामना अधिक धैर्य और साहस के साथ कर पायेंगे। हताशा-निराशा पास में नहीं आयेगी।

यह जान लो कि संसार में सबसे स्थाई सम्बन्ध आपके स्वयं के साथ ही है। वही प्रेम की शक्ति आपको भीतर से मजबूत बनाती है और जीवन क्या है? निरन्तर बदलती हुई परिस्थितियां हैं। भीतर से मजबूत हुए तो हर परिस्थिति का सामना कर लेंगे।

बार-बार अपने आपसे कहो, **मेरे भीतर अपार शक्ति है। मैं सब कार्य सम्पन्न कर सकता हूं।**

बस आपके जीवन में हीन भावना और संदेह कभी आयेंगे ही नहीं, आप अपनी क्षमताओं को कभी कम नहीं समझेंगे और अपने जीवन की दिशा दूसरों के विचारों के अनुसार नहीं, अपने अनुसार तय करेंगे।

ध्यान देना, आत्म प्रेम ही आत्म शक्ति का द्वार है।

स्वयं से प्रेम करना, संसार से दूर होना नहीं है। यह तो जगत से सच्चे प्रेम की शुरुआत है। स्वयं को समझना है, स्वयं को स्वीकार करना है तभी तो दूसरों के प्रति प्रेम और करुणा प्रकट कर सकते है।

जब आप अपने आप से प्रेम करना प्रारम्भ कर देते है तो संसार से प्रेम आपका और अधिक गहरा हो जाता है। परिवार से प्रेम और अधिक गहरा हो जाता है क्योंकि आप किसी भी स्थिति में असन्तुष्ट और अशांत नहीं है। आपने अपने आत्मभाव में प्रेम और आनन्द को स्थापित कर दिया है।

जब ऐसी स्थिति आ जाती है तब आप अपने जगत के विष्णु बन जाते है। विष्णु अर्थात् नारायण और नर से नारायण बनने की क्रिया एक ही है। बिना चिन्ता के कार्य करते रहना। **अपनी पालना करना, अपने आश्रितों की पालना करना, तब जीवन की वास्तविक लक्ष्मी, वह भी प्रेम का ही स्वरूप है, आपके साथ स्थापित होगी। जहां प्रेम है वहां विष्णु है, जहां प्रेम है वहां लक्ष्मी है, जहां प्रेम है वहां शिव है, जहां प्रेम है वहां शक्ति है।**

आज से शुरुआत कीजिये, अपने आपसे प्रेम करना, अपने शरीर और अपने मन की भावनाओं का ध्यान रखना, उनके प्रति सजग रहना।

नन्द किशोर श्रीमाली